

॥ श्रीहरि ॥

भाववान श्रीराम

(हिंदी)



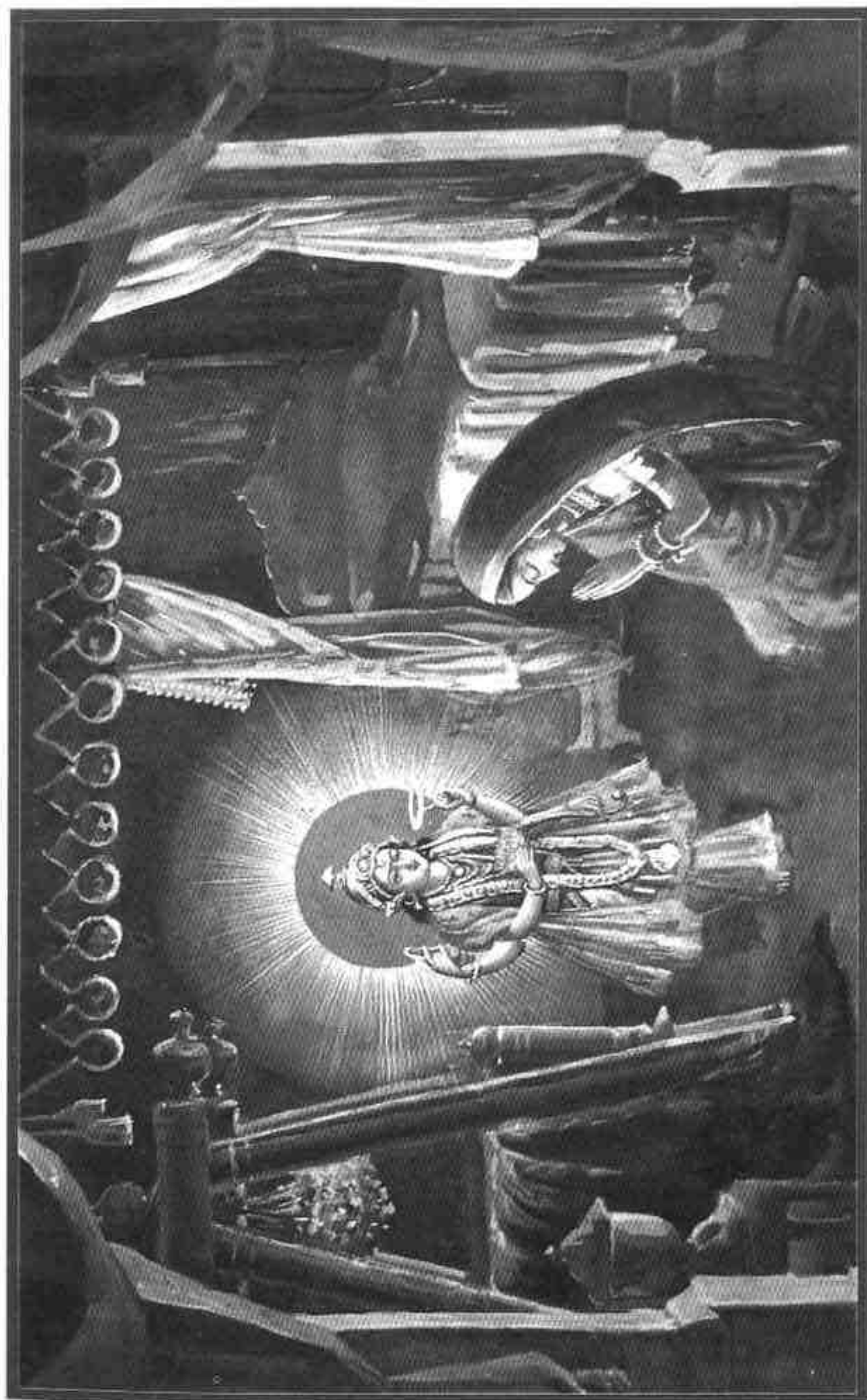
मनु-शतरूपापर कृपा

भगवान्‌के अवतारके अनेक कारण हुआ करते हैं। भक्तोंपर कृपा इनमें प्रमुख है। सृष्टिके प्रारम्भकी कथा है। पितामह ब्रह्माकी आदि संतान हुए—स्वायंभुव मनु। उनकी पत्नीका नाम शतरूपा था। दोनोंका जीवन सत्य, सदाचार और धार्मिकतासे भरा-पूरा था।

बहुत दिनोंतक धरतीपर राज्य करते हुए जब स्वायंभुव मनुका चौथापन आ पहुँचा, तब उन्होंने वनमें जाकर तप करनेका निर्णय लिया। राज्य-भार अपने सबसे बड़े पुत्र उत्तानपादको सौंपकर मनु और शतरूपा भगवान्‌का भजन करनेके लिये महलसे निकल पड़े।

वनमें पहुँचकर एक वट-वृक्षकी छायामें मनु और शतरूपाने कठोर तप प्रारम्भ किया। वेद, उपनिषद् और पुराण जिनकी महिमाका अन्त नहीं पाते ऐसे प्रभुके दर्शनकी इच्छा उनके मनमें दृढ़मूल हो गयी थी। छः हजार वर्षोंतक केवल जल पीकर, सात हजार वर्षोंतक केवल वायु पीकर और दस हजार वर्षोंतक केवल एक पैरपर खड़े रहकर वे तपस्या करते रहे। शरीर सूखकर हड्डियोंका ढाँचामात्र रह गया। उनकी कठिन तपस्या देख ब्रह्मा, विष्णु और महेश तकने उन्हें वर देना चाहा, किंतु अपने निश्चयपर वे अडिग रहे।

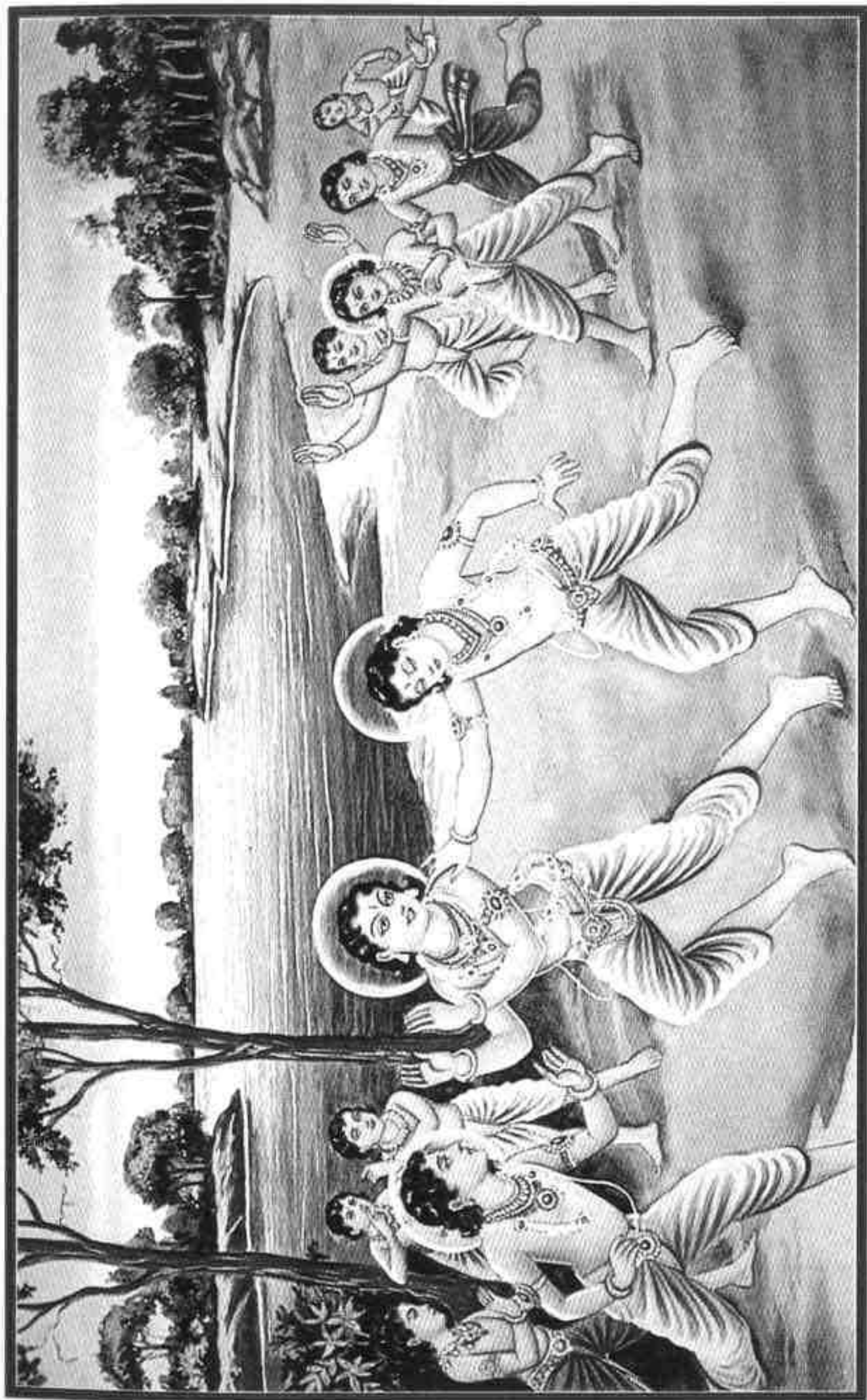
अन्ततः मनु-शतरूपाकी अनन्य भक्ति रंग लायी। 'वर माँगो' की गम्भीर ब्रह्मवाणीसे वातावरण गुंजायमान हो उठा। दम्पतिका शरीर पुनः हृष्ट-पुष्ट हो गया। उन्होंने प्रभुके मुनि-मनहारी स्वरूपको देखनेकी इच्छा व्यक्त की। फलस्वरूप आदिशक्ति जगज्जननी सीतासहित प्रभु श्रीराम प्रकट हो गये। मनु-शतरूपाने प्रभुसे उनके जैसा ही पुत्र वरमें माँगा। प्रभुने उन्हें आश्वासन देते हुए कहा—'अपने-जैसा कहाँ ढूँढ़ें, त्रेतायुगमें जब आप दोनों दशरथ-कौसल्याके रूपमें अयोध्याके राजा-रानी होंगे, तब मैं स्वयं आपके यहाँ अंशोंसहित अवतार लूँगा।' दम्पतिको और भी मनचाहे समस्त वर देकर प्रभु श्रीराम जगदम्बा सीतासहित वहीं अन्तर्धान हो गये। मनु-शतरूपाने प्रभुकी आज्ञा शिरोधार्य कर अमरावतीपुरीमें जाकर वास किया।



श्रीरामावतार

मनु और शतरूपा त्रेतायुगमें दशरथ-कौसल्या हुए। सरयू नदीके तटपर स्थित अयोध्या महाराज दशरथ-जैसा सुयोग्य राजा पाकर खिल उठी थी। कौसल्याके अतिरिक्त महाराजकी दो और रानियाँ थीं—कैकेयी और सुमित्रा। किंतु उनके कोई संतान न थी। कुलगुरु वसिष्ठने समस्याका निराकरण करते हुए महाराजको पुत्रेष्टि यज्ञ करनेका निर्देश दिया। विधिवत् यज्ञ प्रारम्भ हुआ। स्वयं अग्निदेव प्रकट हुए। राजाको उन्होंने चरु प्रदान किया। राजाने चरुका आधा भाग कौसल्याको दिया। आधे भागको पुनः दो भागोंमें विभाजित कर एक भाग कैकेयीको और दूसरे भागको फिर दो भागोंमें विभक्त कर कौसल्या और कैकेयीके हाथपर रखते हुए उन्होंने सुमित्राको दे दिया। यज्ञ सफल रहा। तीनों रानियाँ गर्भवती हुईं।

प्रभु अपने अंशोंसहित जिस दिनसे गर्भमें आये उसी दिनसे रानियोंकी शोभा दुगुनी हो गयी। धीरे-धीरे अवतारका समय नजदीक आ गया। पुनीत चैत्र मासके शुक्ल-पक्षकी नवमी तिथि थी। दोपहर हो चुकी थी। शीतल-मंद-सुगंधित बयार बह रही थी। देवता लोग आकाशमें आकर प्रभुकी स्तुति कर चुके थे। सहसा माता कौसल्याका प्रसूति-कक्ष प्रकाशसे भर गया। चतुर्भुज रूपमें भगवान् प्रकट हो गये। चकित माता यह अद्भुत रूप देख स्तुति करनेमें भी स्वयंको असमर्थ समझने लगी। प्रभुने पूर्वजन्मकी सारी कथा सुनाकर माताको आश्चस्त किया। माताके कहनेपर वह दिव्य चतुर्भुज रूप लुप्त हो गया और एक अनुपम साँवला-सलोना शिशु वहाँ रुदन करने लगा। 'महारानी कौसल्याको पुत्र उत्पन्न हुआ'—यह समाचार पाकर राजमहल ही नहीं अपितु समूची अयोध्या आनन्दसागरमें लहराने लगी। इसी बीच प्रभुके अन्य अंश भी माता कैकेयी और माता सुमित्राकी गोद भर चुके थे। संतानके लिये तरस रहे महाराज दशरथ एक साथ चार-चार पुत्रोंके पिता बन गये थे। उनके आनन्दकी सीमा कहाँ!



बालक्रीड़ा

चारों शिशु माता-पिताके आनन्दको दिन-दूना, रात-चौगुना बढ़ाते हुए बड़े होने लगे। कुलगुरुने नामकरण-संस्कार सम्पन्न कराया। कौसल्यानन्दन श्रीराम, कैकेयीनन्दन भरत और सुमित्रानन्दन लक्ष्मण तथा शत्रुघ्नके नामसे प्रसिद्ध हुए। बचपनसे ही लक्ष्मण श्रीरामके साथ और शत्रुघ्न भरतके साथ अधिक रहते। चारों भाई शील और सुन्दरताकी मूर्ति ही थे। उनमें श्रीराम सबसे बढ़कर थे। उनकी बालसुलभ चंचलता सबका मन हर लेती।

महलसे निकलकर चारों भाई अब अयोध्याकी गलियोंमें भी घूमने लगे। नगरके बालक-युवक-वृद्ध सभी उनके दर्शनोंके लिये लालायित रहते। वे भी सबको यथोचित आदर और दुलार देनेमें कभी पीछे नहीं हटते थे। श्रीराम तो अपने खिलौने तक साथियोंको बाँट दिया करते।

एक समयकी बात है। सरयूके किनारे बालकोंका दो दल बना। एक दलका नेतृत्व श्रीराम तथा दूसरेका श्रीभरतलालजी कर रहे थे। छुआ-छुईका खेल चलने लगा। यह क्या, प्रभु रामका दल बार-बार हार रहा है! यही तो दयालुताकी सीमा है। भगवान् अपने भक्तोंको खेलमें भी हारते हुए देखना नहीं चाहते। और, भरतलालजीसे बड़ा भक्त भगवान् रामका और कौन हो सका है भला? यही कारण है श्रीरामके हारनेका। भक्तकी जीतमें ही भगवान्की जीत है। वैसे भरतजीका भी प्रयास यही है कि खेलमें प्रभुके दलकी जीत हो।

तीनों भाई सदैव श्रीरामके संकेतोंका अनुसरण करते रहते थे। दूसरी ओर श्रीराम भी उनकी प्रत्येक इच्छाका ध्यान रखते थे। जाने कितनी क्रीड़ाएँ हुईं। राजा दशरथका महल तो इन राजकुमारोंके चांचल्यसे चहक ही उठा था, पूरी अयोध्या इनकी क्रीड़ामें सहभागिनी हो चली थी। महारानियोंसहित महाराज और अयोध्याके नर-नारियोंका भाग्य देवताओंकी भी ईर्ष्याका कारण बन गया था।

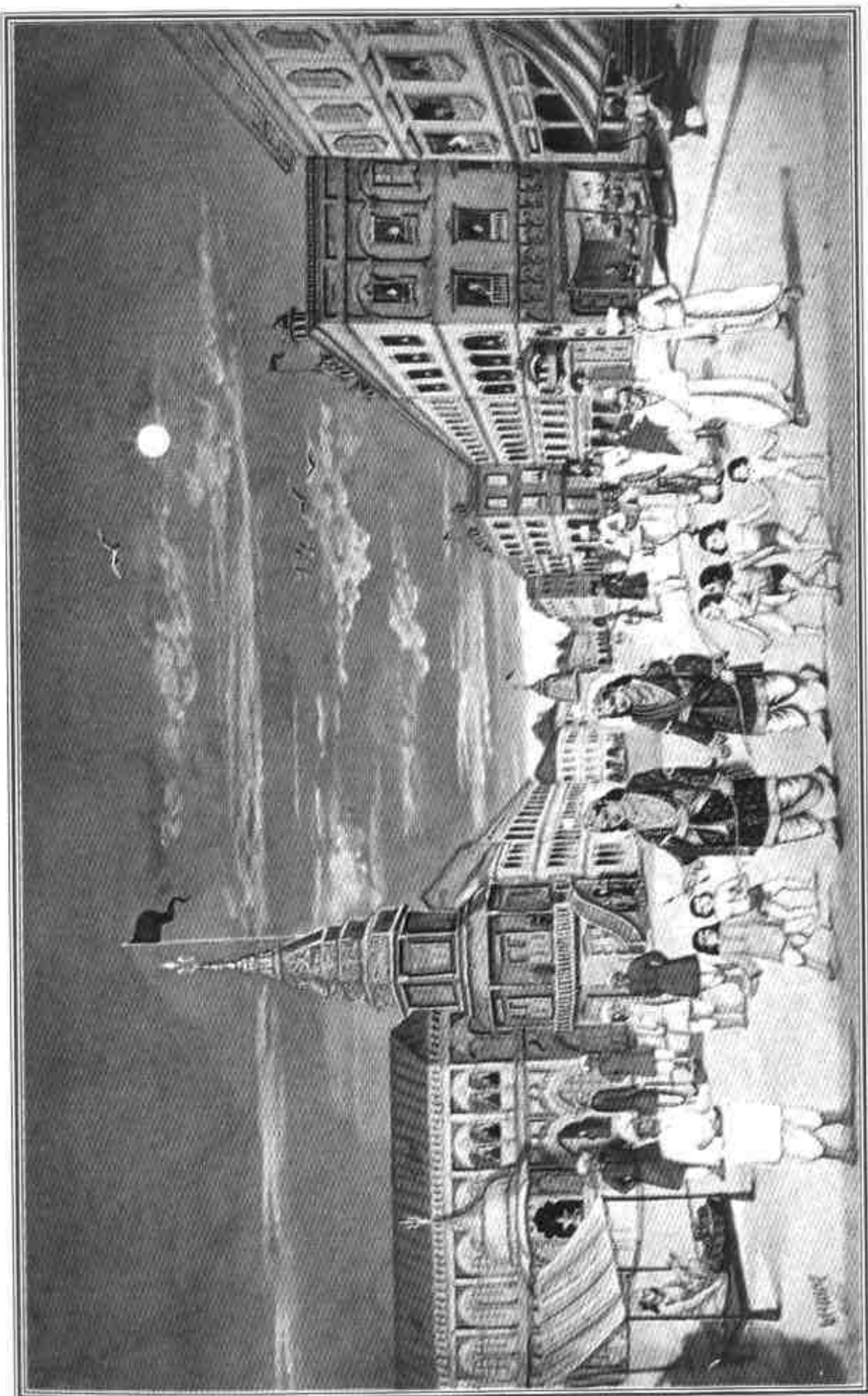


महर्षि विश्वामित्रके यज्ञकी रक्षा

कुछ और बड़ा होनेपर चारों कुमारोंकी शिक्षा प्रारम्भ हुई। संसारकी समस्त विद्याएँ जिनके आश्रयमें ही फलती-फूलती हैं, उन्हें भला कौन पढ़ा सकता है? किंतु भगवान् श्रीराम तो अपने अंशोंसहित नरलीला कर रहे हैं, अतः विद्या ग्रहण करनेकी लीला भी उनको करनी ही पड़ेगी। थोड़े ही समयमें भाइयोंसहित भगवान् श्रीराम सभी विद्याओंमें पारंगत हो गये और गुरुदेव वसिष्ठजीकी आज्ञा प्राप्तकर वापस महलमें आ गये।

कुछ दिन और बीतनेपर महर्षि विश्वामित्र महाराज दशरथके पास आये। महर्षिको अपने यज्ञकी रक्षाके लिये श्रीराम और लक्ष्मणकी आवश्यकता थी। वे जानते थे कि दशरथजीके यहाँ भक्तोंकी रक्षा और दुष्टजनोंके संहारके लिये स्वयं भगवान्ने अवतार लिया है। अतः भगवान्के दर्शनकी इच्छा उन्हें यहाँतक खींच लायी थी।

श्रीराम और लक्ष्मण महाराज दशरथको प्राणोंसे भी अधिक प्रिय थे। महाराज संकोचमें पड़ गये, किंतु कुलगुरु वसिष्ठजीके समझानेपर उन्होंने महर्षिकी माँग पूरी कर दी। श्रीराम और लक्ष्मण महर्षि विश्वामित्रके साथ उनके यज्ञकी रक्षा करने चल पड़े। सबसे पहले ताड़का नामक राक्षसीसे उनका सामना हुआ। श्रीरामके एक ही बाणने उसका काम तमाम कर दिया। उनका अपूर्व पौरुष देख महर्षि अति प्रसन्न हुए। अपने समस्त दिव्यास्त्र उन्होंने तत्काल श्रीरामको दे डाले। आश्रम पहुँचकर श्रीरामने मुनियोंको निर्भय होकर यज्ञ करनेके लिये कहा और स्वयं छोटे भाई लक्ष्मणके साथ धनुषपर बाण चढ़ा पहरा देने लगे। यज्ञ प्रारम्भ होते ही ताड़काके पुत्र मारीच और सुबाहु अपनी राक्षसी सेनाके साथ आ धमके। श्रीरामने बिना फलका एक बाण मारकर मारीचको सौ योजन दूर फेंक दिया। सुबाहु उनके अग्निबाणसे भस्म हुआ। उधर लक्ष्मणने देखते-ही-देखते समूची राक्षसी सेनाका सफाया कर दिया। इस प्रकार महर्षि विश्वामित्रका यज्ञ निर्विघ्न सम्पन्न हुआ।



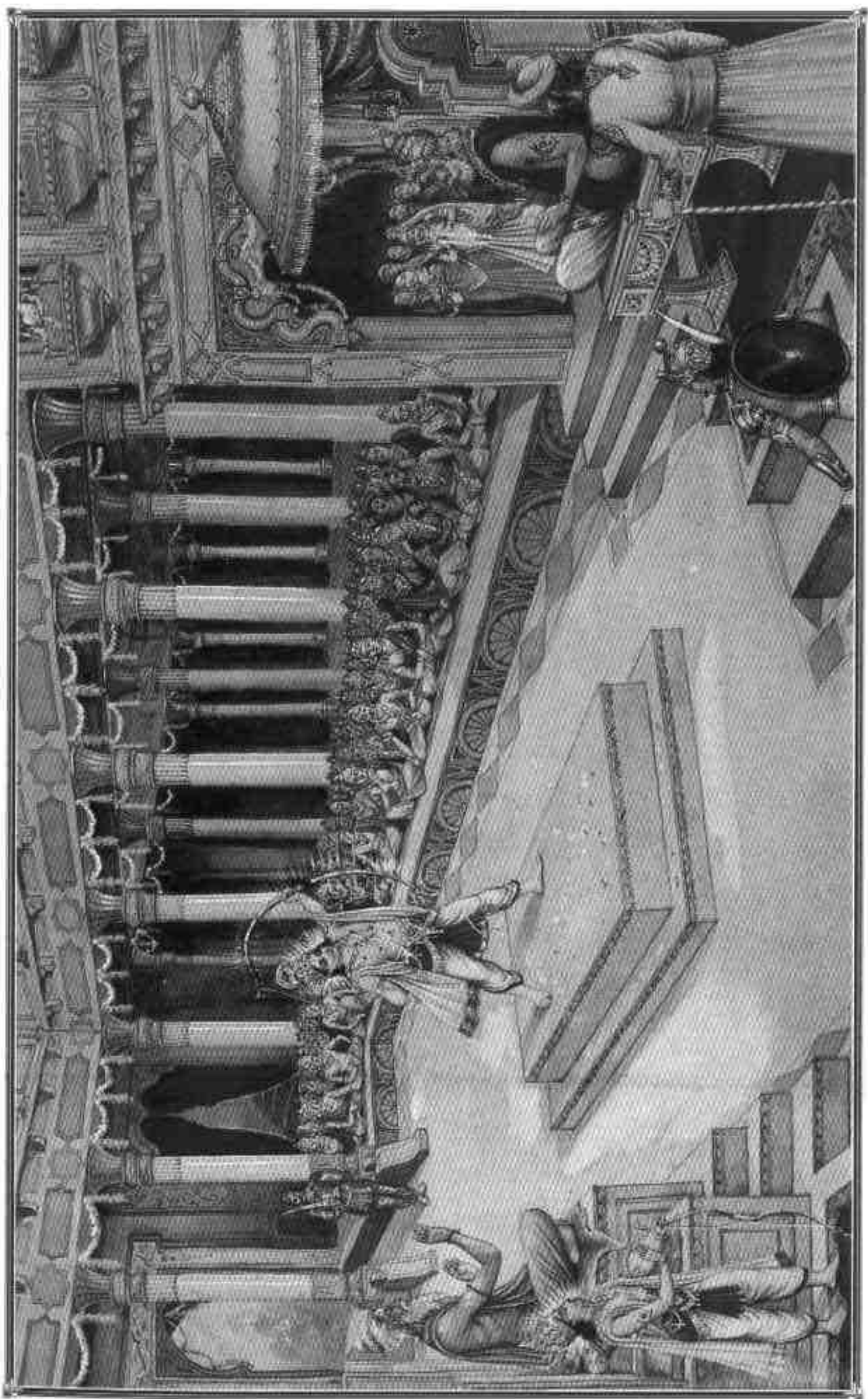
जनकपुरमें श्रीराम-लक्ष्मण

मिथिला-नरेश महाराज जनकके यहाँ भगवान् श्रीरामकी आदिशक्ति भगवती सीताका अवतरण हुआ था। इधर प्रभु श्रीरामकी लीला चल रही थी तो उधर जगदम्बा सीताकी। महाराज जनकने सीताजीके विवाहके लिये स्वयंवर रचाया। 'शिवजीका विशाल धनुष तोड़ना' विवाहकी शर्त बनी। देश-देशके राजा-राजकुमार मिथिला पहुँचने लगे।

प्रभु श्रीराम-लक्ष्मण और मुनि-मंडलीके साथ महर्षि विश्वामित्रने भी मिथिलाके लिये प्रस्थान किया। मार्गमें पत्थर बन चुकी गौतम ऋषिकी पत्नी अहल्याका वृत्तान्त श्रीरामने उनसे सुना। भगवान् रामके चरण-स्पर्शसे ऋषि-पत्नीका उद्धार हुआ और वह उनकी स्तुति करती पतिलोक चली गयी। मिथिलाके समीप पहुँचकर एक रमणीय उपवनमें मुनि-मंडलीसमेत श्रीरामने विश्राम किया।

जैसे ही महाराज जनकको महर्षि विश्वामित्रके आगमनकी सूचना मिली, वे अपने पार्षदोंके साथ स्वागतके लिये चल पड़े। कुशल-क्षेमके बाद श्रीराम-लक्ष्मणको देखकर विदेहराज सचमुच विदेह हो गये। अत्यन्त आदरके साथ उन्होंने महर्षि विश्वामित्रके साथ आये मुनियों और दोनों भाइयोंको एक दिव्य महलमें ठहराया।

लक्ष्मणजीके मनमें नगर-दर्शनकी इच्छा हुई। मुनिवर विश्वामित्रसे आज्ञा लेकर श्रीराम छोटे भाईको नगर दिखाने ले चले। जनकपुरवासियोंने जब सुना कि अद्वितीय वीर और अनुपम सुन्दर दो दिव्य राजकुमार नगर घूमने आये हैं, तब आबाल-वृद्ध नर-नारी सभी अपना सारा काम छोड़ उन्हें देखनेके लिये आतुर हो उठे। युवतियाँ झरोखोंमें आ-आकर उन्हें देखतीं और फूल बरसातीं। वे परस्पर कहतीं कि 'सीताजीके योग्य वर तो ये साँवले-सलोने राम ही हैं।' जनकपुरके बालक श्रीराम-लक्ष्मणके आगे-आगे चल उन्हें रास्ता बताते। अपने रूप-सौन्दर्यकी अनुपम छटासे समस्त मिथिलावासियोंको मुग्ध करके दोनों भाई मुनिवर विश्वामित्रकी सेवामें वापस आ गये।



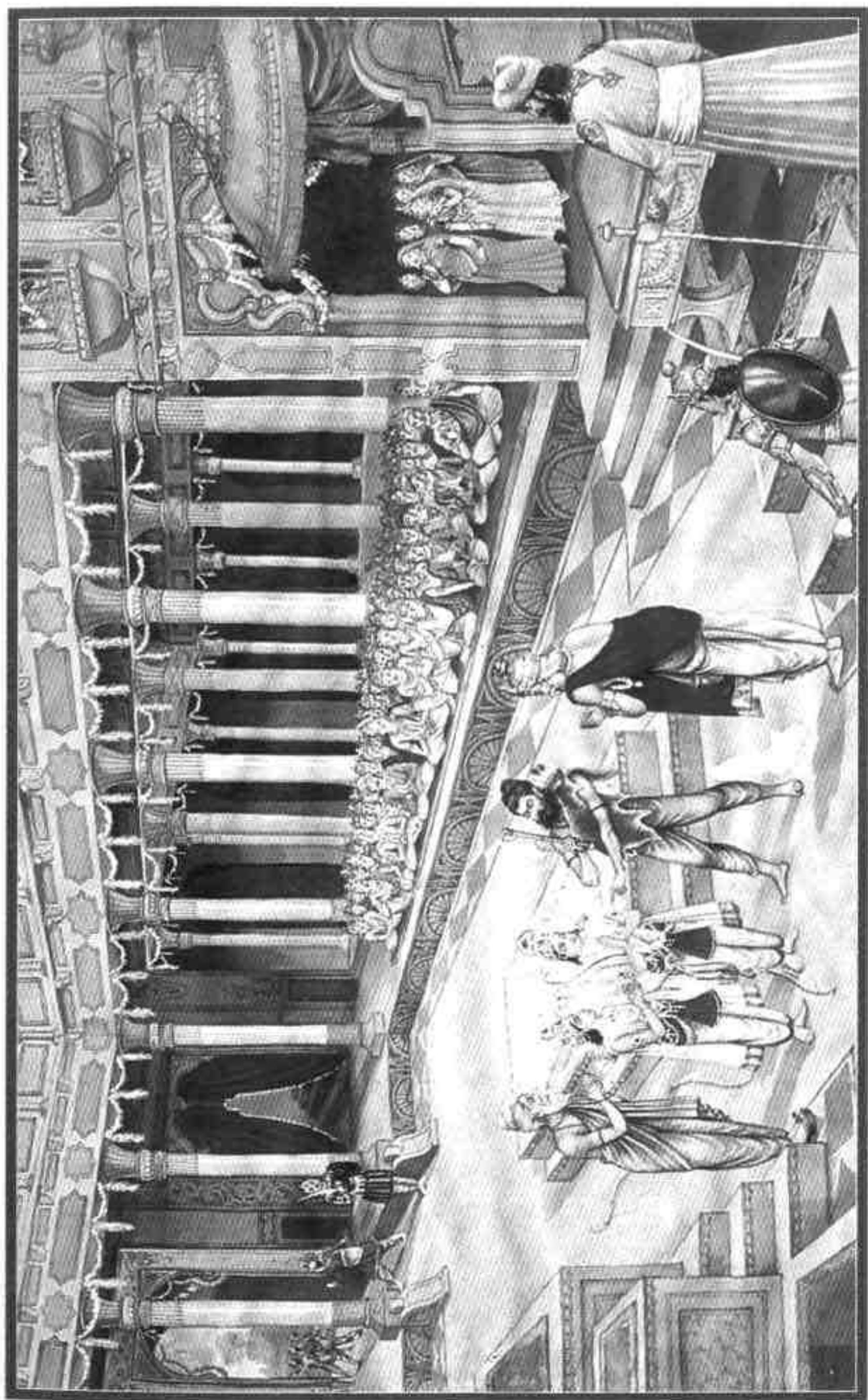
धनुष-भङ्ग

धीरे-धीरे सीताजीके स्वयंवरका दिन भी आ गया। रंगभूमि देश-विदेशके राजाओं-राजकुमारों और जनकपुरवासियोंसे खचाखच भर गया। मुनिवर विश्वामित्रके साथ श्रीराम-लक्ष्मण भी वहाँ आ पहुँचे। महाराज जनकने अत्यन्त आदरके साथ उन्हें विशेष आसनपर विराजमान किया।

प्रभुका दिव्य रूप सबके आकर्षणका केन्द्र बन गया था। जिसकी जैसी भावना थी, उसीके अनुरूप उसे श्रीराम दिखायी दिये। भक्तके लिये वे भगवान् थे तो दुष्ट जनोंके लिये साक्षात् यमराज। प्रभुके आगमनसे ही उनके सभी प्रतिद्वन्दी उसी प्रकार फीके पड़ गये, जिस प्रकार सूर्यके उदय होनेपर तारे। सभी मन-ही-मन यह समझ चुके थे कि वरण तो सीताजी श्रीरामका ही करेंगी।

बंदीजनोंने महाराज जनककी पहलेसे रखी सीता-विवाहके शर्तको उपस्थित लोगोंके समक्ष पुनः दोहराया—‘शिवजीके इस विशाल धनुषको जो वीर तोड़ देगा, तीनों लोकोंमें यशके साथ राजकुमारी सीता उसे मिलेंगी।’ बलके अभिमानी राजा जोर-आजमाइश करने लगे। धनुष टस-से-मस न हुआ। सभी राजा-राजकुमारोंके बलकी थाह लग गयी। महाराज जनक पीड़ित स्वरमें बोले—‘लगता है सीताका विवाह विधाताको मंजूर ही नहीं। अब कोई अपनेको वीर कहनेका अभिमान न रखे। मुझे तो पूरी धरती ही वीर-विहीन जान पड़ती है।’

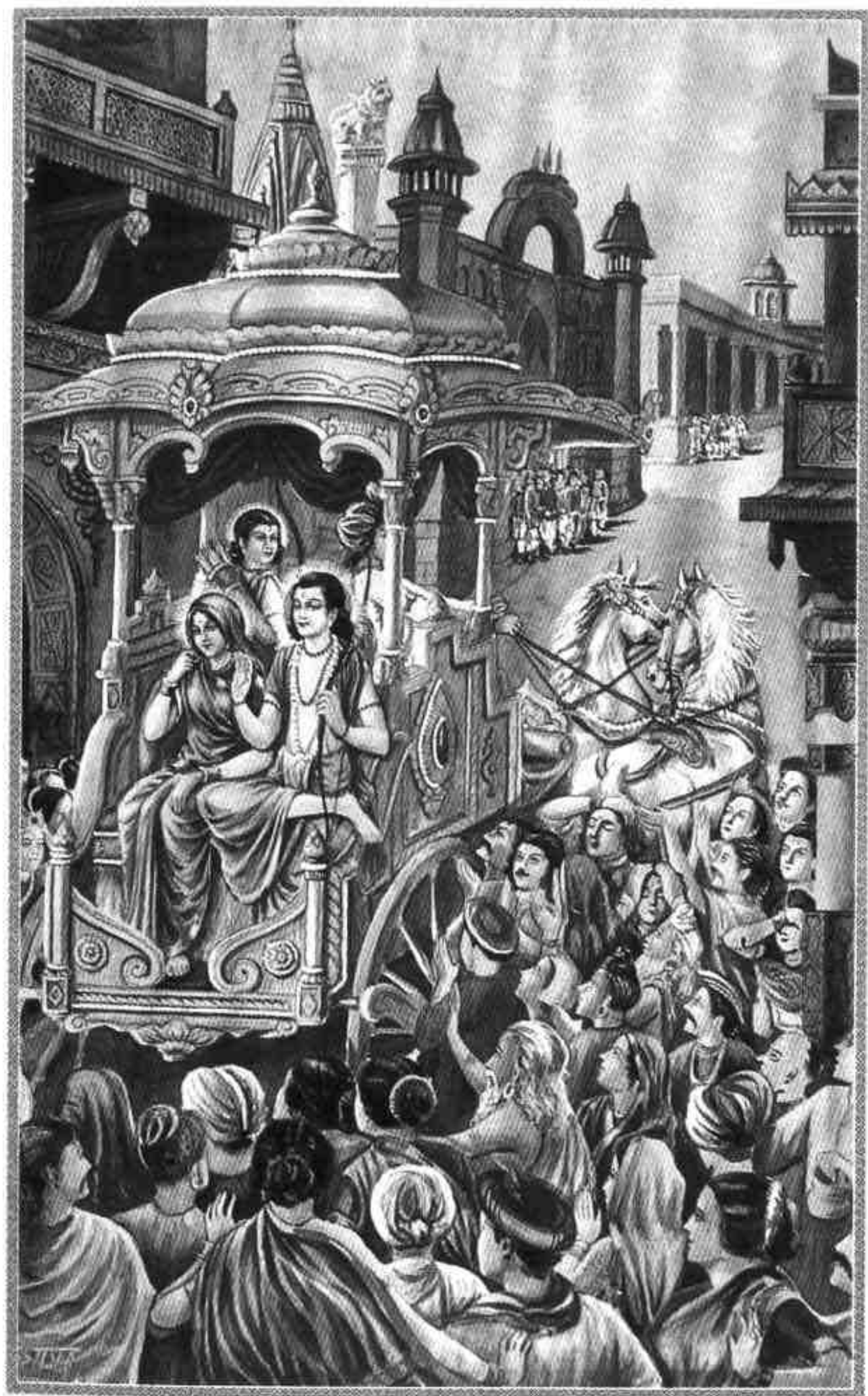
श्रीरामके परम अनुयायी लक्ष्मण यह सुनकर तमक उठे। श्रीरामने उन्हें शान्त रहनेका संकेत किया। महर्षि विश्वामित्र बोले—‘राम! उठो, धनुष तोड़कर जनकका परिताप दूर करो।’ भगवान् श्रीराम मुनिवरके चरणोंमें सिर झुकाकर उठे। लक्ष्मणने दिक्पालोंको सावधान कर दिया। प्रभु सिंहकी-सी चाल चलते धनुषके समीप पहुँचे। मन-ही-मन गुरुदेवके चरणोंमें प्रणाम करके बिजलीकी गतिसे उन्होंने धनुष उठाया, चढ़ाया और बीचोबीचसे तोड़ दिया। सखियोंके साथ जगदम्बा सीता आयीं और जगत्पिता श्रीरामके गलेमें उन्होंने जयमाल पहना दिया।



श्रीराम और लक्ष्मणका परशुरामके साथ संवाद

शिवजीका धनुष टूटनेसे उत्पन्न भीषण ध्वनि सुनकर परम तेजस्वी परशुराम जनकपुर आये। वे शिवजीके उपासक थे और उनका क्रोध संसारमें प्रसिद्ध था। जनक-दरबारमें उनके पहुँचते ही भयभीत राजा लोग पिता-सहित अपना नाम ले-लेकर उन्हें प्रणाम करने लगे। महाराज जनकने सीताजीको उनसे आशीर्वाद दिलाया। महर्षि विश्वामित्र भी श्रीराम-लक्ष्मणके साथ उनसे मिले। श्रीराम-लक्ष्मणके अद्भुत सौन्दर्यको देखकर परशुरामजी थकित रह गये।

तभी भृगुकुलनन्दनकी दृष्टि शिवजीके टूटे धनुषपर पड़ी। क्रोधित होकर उन्होंने कहा—‘जनक! बता, मेरे आराध्यदेवका यह धनुष किसने तोड़ा?’ भय-विह्वल जनक कुछ बोल न सके। श्रीरामने उत्तर दिया—‘नाथ! आपका ही कोई दास धनुष तोड़नेके लिये जिम्मेदार है, आप आदेश करें उसके लिये।’ परशुराम बोले—‘सेवक या दास वह है जो सेवा करे, शिवजीका धनुष तोड़नेवाला तो सहस्रबाहुके समान मेरा शत्रु है; वह यदि इस सभासे अलगा नहीं दिया जाता तो यहाँ उपस्थित समस्त राजागण मारे जायँगे।’ परशुरामजीकी यह गर्वोक्ति सुनकर लक्ष्मणजीने कहा—‘बचपनमें हमने ढेरों धनुहियाँ तोड़ डालीं, तब तो आपने कभी क्रोध नहीं किया; फिर, इस पुराने धनुषपर ही इतनी ममता क्यों?’ परशुरामजीकी क्रोधाग्निमें जैसे आहुति पड़ गयी। अपने फरसेको सुधारकर वे लक्ष्मणजीको धमकाने लगे। लक्ष्मणजी भी अपने व्यंग्यबाणोंसे परशुरामजीको छलनी करने लगे। अन्ततः श्रीरामने पहले लक्ष्मणको संकेतसे शान्त कराया, फिर परशुरामजीकी ओर उन्मुख होकर वे बोले—‘विप्रवर, आपका अपराधी तो मैं हूँ। मुझे आप जो चाहे दण्ड दें। लक्ष्मण अभी बालक है। बालककी बातोंका गुरुजन बुरा नहीं मानते।’ भगवान् रामकी शान्त, शीतल और रहस्यमय वाणी सुन परशुरामजीकी बुद्धिसे परदा हट गया। भगवान् विष्णुका धनुष श्रीरामको प्रदान कर वे महेन्द्रगिरिपर तपस्या करने चले गये।



वन-गमन

श्रीराम-सीताका विवाह तो धनुष टूटनेके साथ ही सम्पन्न हो चुका था। फिर भी कुलकी रीति और परम्पराके अनुसार अयोध्या दूत भेजे गये। महाराज दशरथ सजी-धजी बरात लेकर आये। श्रीरामके साथ ही उनके तीनों भाइयोंका भी विधिवत् विवाह-संस्कार सम्पन्न हुआ— भरतलालका माण्डवीके साथ, लक्ष्मणजीका उर्मिला और शत्रुघ्नजीका श्रुतकीर्तिके साथ। महाराज दशरथ अपने चारों पुत्रों और पुत्रवधुओंको लिवाकर अयोध्या वापस लौटे। अयोध्याकी खुशीका पारावार न था। कुछ दिन वहाँ रहकर महर्षि विश्वामित्र भी अपने आश्रम लौट गये।

महाराज दशरथ श्रीरामको राज्यका भार सौंप देना चाहते थे। सभासदोंकी सलाह और गुरुदेव वसिष्ठकी आज्ञासे राजतिलककी तैयारी होने लगी। देवता सोचने लगे कि यदि भगवान् श्रीराम राजा बनकर अयोध्या ही रह जायँगे तो असुरोंका विनाश कैसे होगा? बुद्धिकी देवी सरस्वतीको प्रेरित कर उन्होंने मन्थराके माध्यमसे महारानी कैकेयीकी मति फेर दी। वैसे माता कैकेयी श्रीरामको प्राणोंसे भी बढ़कर चाहती थीं; किंतु मति विपरीत हो जानेके कारण श्रीरामका युवराज बनना उन्हें खटकने लगा। सारी अयोध्या श्रीरामके राजतिलककी तैयारी करते हुए उल्लसित थी और महारानी कैकेयी कोपभवनमें पहुँच गयीं। महाराज दशरथसे उन्होंने अपने दो वरोंको माँगा। पहले वरके रूपमें भरतजीको युवराजका पद और दूसरे वरके रूपमें श्रीरामको चौदह वर्षोंके लिये वनवास।

भगवान् श्रीरामने पिताके वचनकी लाज रखते हुए वनके लिये प्रस्थान किया। सीताजी और लक्ष्मणने भी प्रभुका अनुगमन किया। अयोध्या-निवासी भी श्रीराम-लक्ष्मण और सीताके पीछे-पीछे वन जानेको उद्यत हो गये। कुछ दूरतक वे साथ गये भी। किंतु प्रजाको वनका कष्ट न हो इस कारण रातमें जब सब लोग सो रहे थे; तभी सुमन्त्रसे कहकर लक्ष्मण और सीतासहित श्रीराम वनकी ओर चल पड़े।

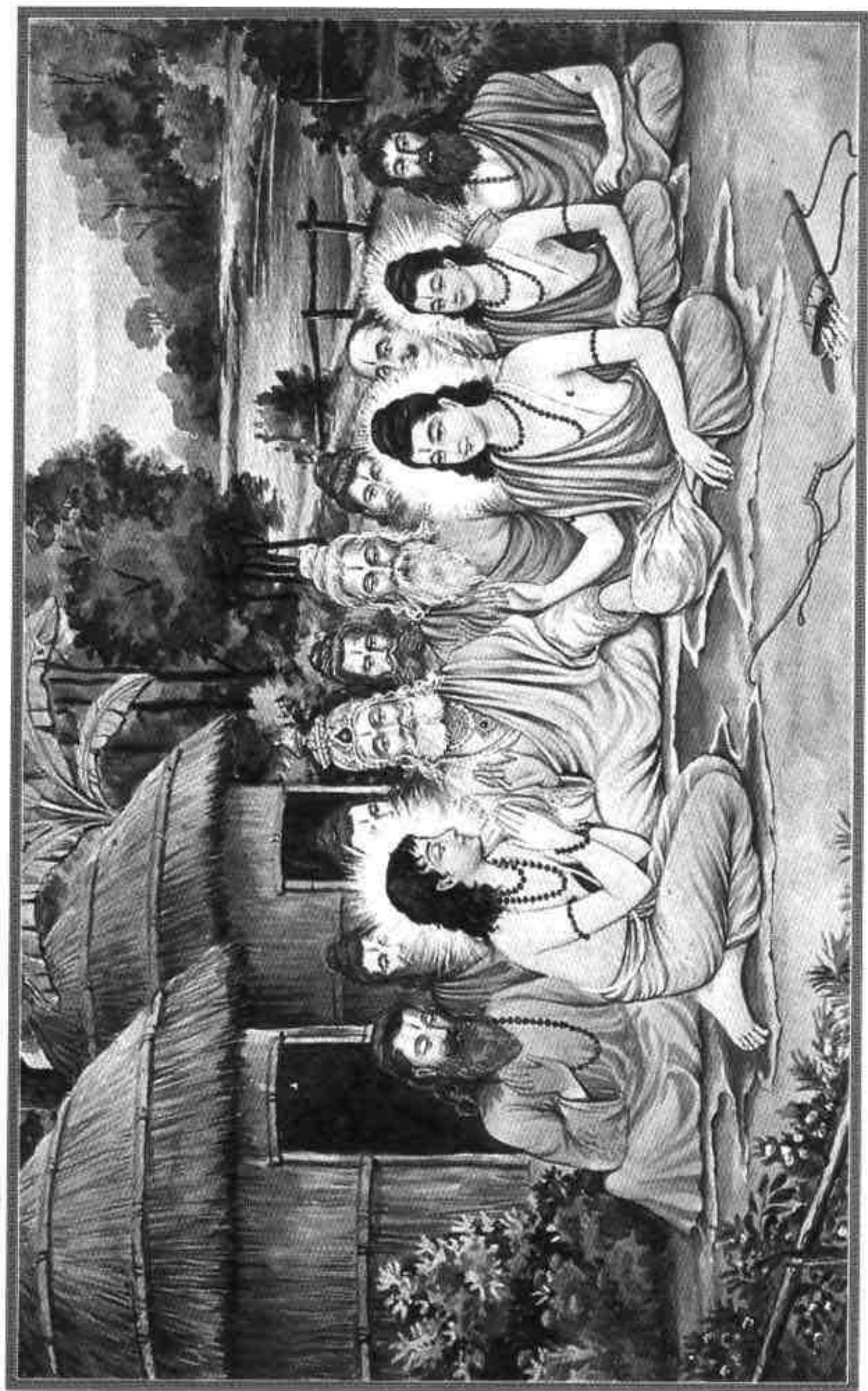


केवटपर अनुग्रह

नींद खुलनेपर श्रीरामको न देख प्रजा व्याकुल हो गयी। रथके पहियोंके निशान भी श्रीरामके कहनेपर सुमन्त्रने मिटा दिये थे। थक-हारकर सब लोग वापस अयोध्या लौट आये। इधर श्रीराम शृंगवेरपुर पहुँचे। वहाँका शासक निषादराज गुह श्रीरामका मित्र था। प्रभुके स्वागतके लिये वह अपने समाजके साथ आ पहुँचा। उसने श्रीरामसे नगरमें चलकर वहीं निवास करनेका आग्रह किया। किंतु श्रीरामने कहा—‘मैं चौदह वर्षतक किसी नगरमें प्रवेश नहीं कर सकता।’ तब निषादराज नगरके बाहर ही उनके रात्रि-विश्रामका प्रबन्ध करके स्वयं भी उस रात उनके सांनिध्यमें रहा। श्रीराम और सीताको कुशकी शय्यापर सोते देख वह अत्यन्त दुःखी हुआ। लक्ष्मणने ज्ञानका उपदेश देकर उसे ढाढ़स बँधाया।

दूसरे दिन श्रीरामने बहुत अनुनय-विनय करके सुमन्त्रको भी रथ लेकर अयोध्या वापस भेज दिया। आगेकी यात्रा सीताजी और लक्ष्मणके साथ उन्होंने पैदल ही करनेका निश्चय किया। निषादराज गुहके साथ वे गङ्गाजीके तटपर पहुँचे। पार उतरनेके लिये उन्होंने केवटसे नावकी माँग की। वह केवट प्रभु श्रीरामका अनन्य किंतु अल्हड़ भक्त था। उसने कहा—‘प्रभो! मैं आपका मर्म समझता हूँ। आपके चरणोंकी धूलके स्पर्शसे पत्थर भी स्त्री हो गयी। कहीं मेरी यह काठकी नाव भी कुछ और बन गयी तो मेरा क्या होगा? यदि आप पार उतरना चाहते हैं तो आपको अपने चरण मुझसे धुलाने पड़ेंगे।’

श्रीरामने केवटकी भक्तिपूर्ण याचना स्वीकारते हुए कहा—‘भाई! तुम वही करो जिससे तुम्हारी नाव रह जाय।’ इसके बाद केवट कठौता-भर जल लेकर उपस्थित हुआ। प्रभुके चरणोंको पखारकर परिवारसहित स्वयं भी उसने चरणामृत पान किया, और तब प्रभु श्रीराम, माता जानकी तथा लक्ष्मणजीको नावपर चढ़ाकर उसने गङ्गाजीके पार उतारा। देवता लोग भी केवटके भाग्यकी सराहना करने लगे।



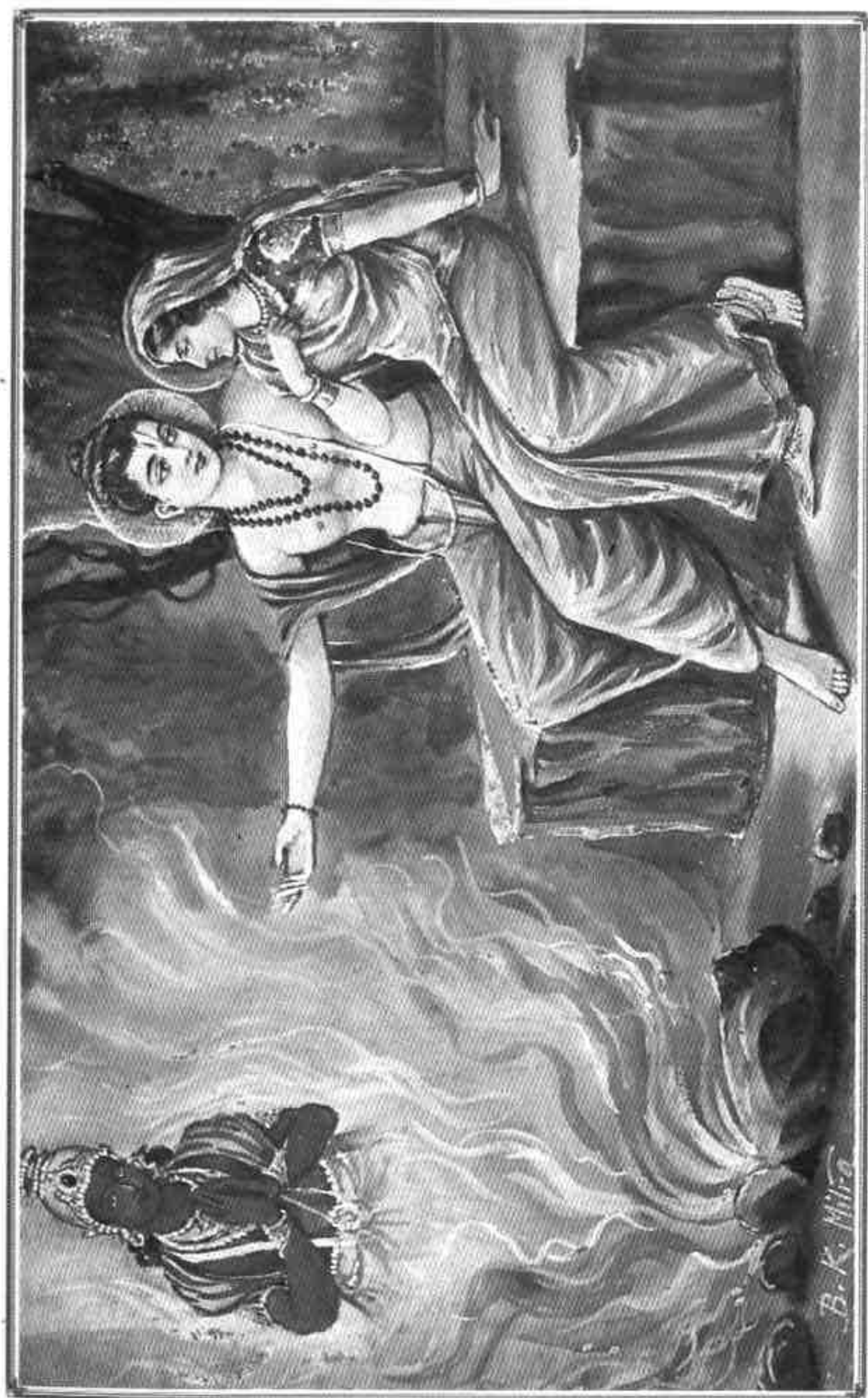
भरतजी चित्रकूटमें

सुमन्त्रजीको अकेले आते देख महाराज दशरथके दुःखकी सीमा न रही। उनसे यह सुनकर कि श्रीराम सीता और लक्ष्मणसहित सचमुच वन चले गये, महाराजका धैर्य टूट गया। 'राम-राम' कहते हुए उन्होंने अपने प्राण त्याग दिये। महलमें हाहाकार मच गया।

इन सारी घटनाओंसे अनभिज्ञ भरतजी शत्रुघ्नजीके साथ ननिहालमें थे। गुरुदेव वसिष्ठद्वारा भेजे गये दूतने उनसे तुरंत अयोध्या लौटनेको कहा। अयोध्या पहुँचनेपर सारा समाचार उन्होंने सुना और आत्मग्लानिसे भर उठे। कैकेयीसे तो उन्होंने बात तक करना बंद कर दिया। माता कौसल्यासे लिपटकर वे खूब रोये। माताने ढाढ़स बँधाया।

अगले दिन गुरुदेव वसिष्ठ तथा अन्य सभासदोंने मिलकर भरतजीसे राज्यभार सँभालनेका आग्रह किया। किंतु अत्यन्त विनम्रतासे उन्होंने यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया और कहा कि 'भइया श्रीराम ही अयोध्याके वास्तविक राजा हैं। हम सब वनमें चलकर उनका राज्याभिषेक करेंगे और उन्हें वापस लायेंगे।' अयोध्यामें एक बार फिर खुशीकी लहर दौड़ गयी। राजमाताओं और कुलगुरु वसिष्ठसहित सारी प्रजाके साथ भरतलालजीने वनकी ओर प्रस्थान किया।

श्रीराम लक्ष्मण और सीताजीके साथ चित्रकूटमें निवास कर रहे थे। निषादराज गुहने भरतजी और उनके समाजको चित्रकूट पहुँचा दिया। महाराज जनक भी सारा समाचार जानकर चित्रकूट पहुँच गये। विचार-विनिमयका सिलसिला चला। अन्तमें श्रीरामने ही सबको और विशेष रूपसे भरतजीको समझाते हुए कहा कि 'पिताजीके वचनोंका पालन करना ही हम सबका परम धर्म है।' बड़े भइयाकी चरण-पादुका पाकर भरतजी समाजसहित अयोध्या लौट आये। राजसिंहासनपर चरण-पादुकाको पधराकर तथा शत्रुघ्नजीको राज्यकी जिम्मेदारी सौंपकर स्वयं भरतलाल नन्दिग्राममें तपस्वी जीवन बिताने लगे।

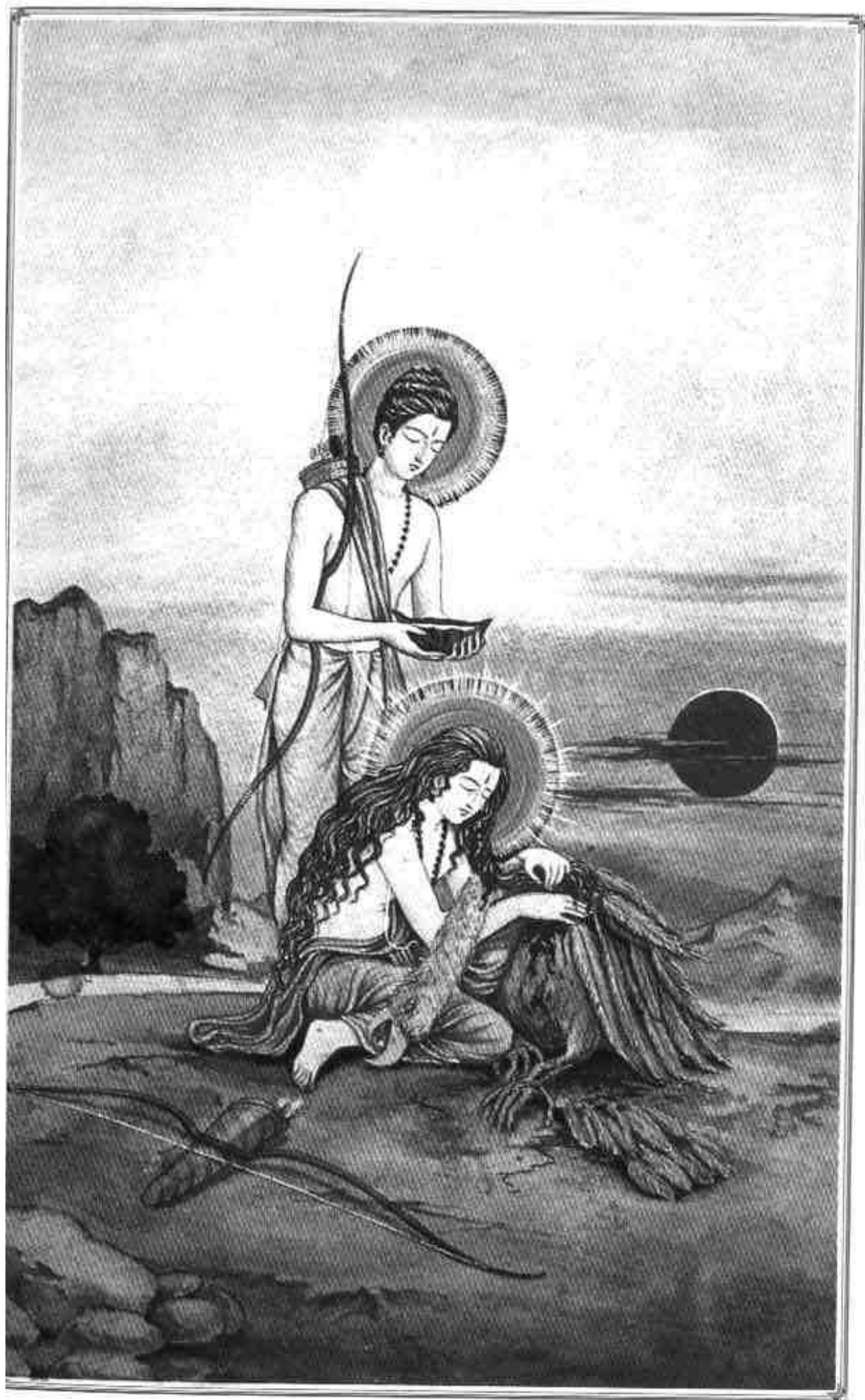


सीताजीका अग्नि-प्रवेश

चित्रकूटमें रहते हुए भगवान् श्रीरामको बहुत दिन बीत गये थे। महर्षि अत्रिसे अनुमति लेकर अब उन्होंने पंचवटी जानेका विचार किया। पंचवटी पहुँचकर लक्ष्मणजीने पर्णकुटी तैयार की और वनवासकी अवधि व्यतीत की जाने लगी।

लंकाधिपति रावणकी बहिन शूर्पणखा अत्यन्त क्रूर राक्षसी थी। एक बार घूमते हुए वह इधर ही आ गयी। भगवान् श्रीरामके अनुपम सौन्दर्यको देखकर वह मोहित हो गयी। उसने प्रभुसे प्रणय-निवेदन किया। श्रीरामने उसे लक्ष्मणके पास भेजा और लक्ष्मणने पुनः श्रीरामके पास। दोनों तरफसे असफल होकर शूर्पणखा सीताजीको मारने झपटी। श्रीरामका इशारा पाकर लक्ष्मणने अत्यन्त फुर्तीके साथ उसे नाक-कान-विहीन कर दिया। शूर्पणखा रोती हुई अपने भाइयों खर-दूषणके पास गयी। अत्यन्त क्रुद्ध होकर अपनी विशाल राक्षसी सेनाके साथ वे श्रीरामपर आक्रमण करने आये। किंतु श्रीरामने उनकी सारी सेनाके साथ उन्हें भी मारकर यमलोक पहुँचा दिया। शूर्पणखा रोती-बिलखती रावणके पास पहुँची और उससे सारा समाचार उसने कह सुनाया। रावण सोचमें पड़ गया। उसे विश्वास हो गया कि खर और दूषण जैसे वीरोंका वध स्वयं भगवान् ही किया होगा। रावणने निश्चय कर लिया कि यदि वे भगवान् हैं तो भी उनसे वैर ठानेगा और उनके हाथों मरकर मुक्त हो जायगा। वह मारीचके पास गया और उसे स्वर्ण-मृग बननेपर उसने विवश कर दिया।

इधर पंचवटीमें भगवान् श्रीरामने सीताजीसे कहा—‘प्रिये! अब मैं कुछ दिनोंतक नर-लीला करते हुए धरतीको राक्षसोंके बोझसे मुक्त करना चाहता हूँ। जबतक मेरी यह लीला चले, तबतक तुम अग्निमें निवास करो।’ उनकी आज्ञा शिरोधार्य करके सीताजी अग्निमें प्रविष्ट हो गयीं और रूप-गुणमें समतुल्य अपना ही प्रतिबिम्ब उन्होंने प्रभुकी सेवामें वहाँ रख छोड़ा। लक्ष्मणजी भी यह रहस्य न जान सके।

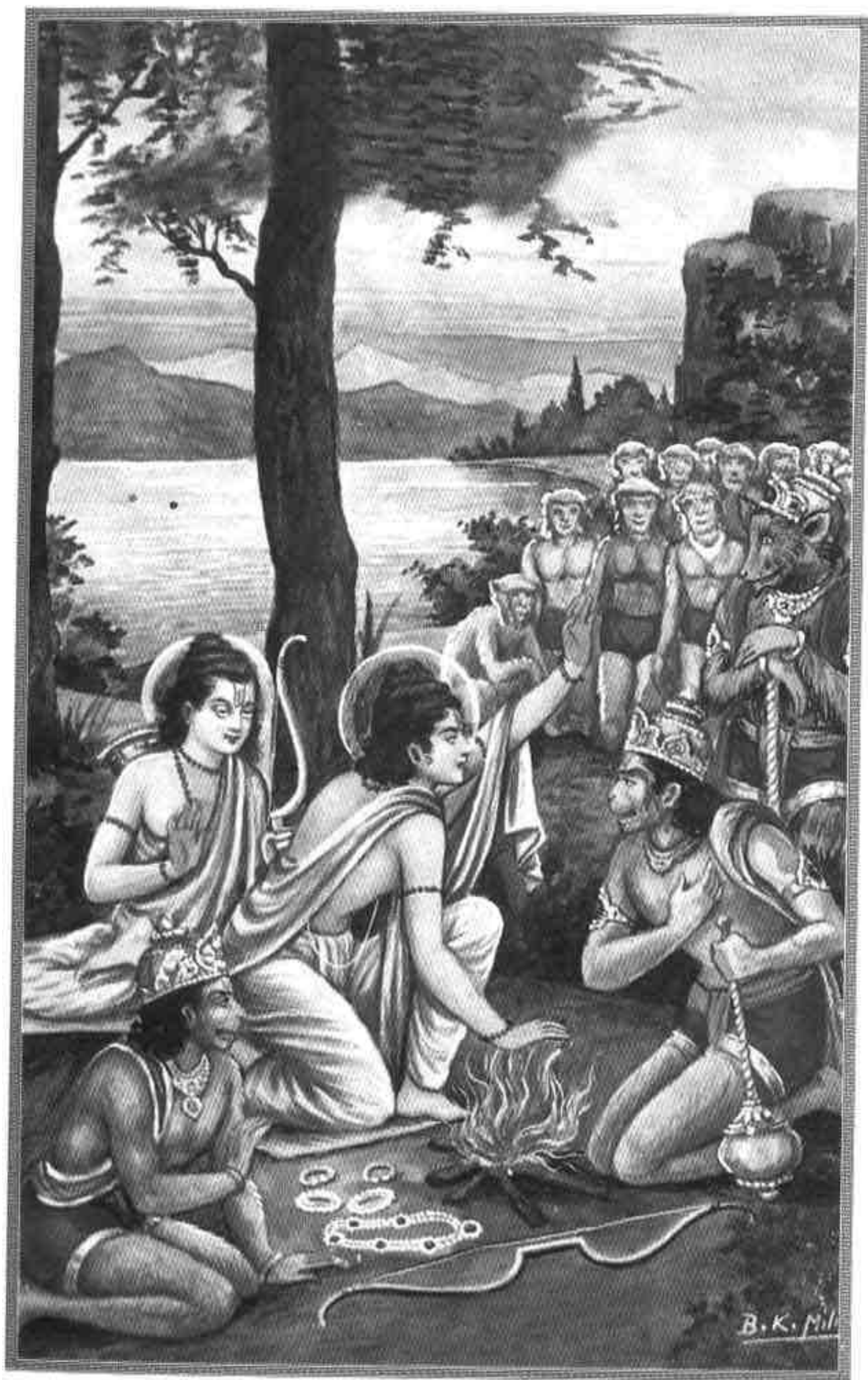


जटायुपर कृपा

मारीच स्वर्ण-मृग बनकर श्रीरामकी कुटियाके आस-पास विचरने लगा। सीताजीने उसकी खालके लिये प्रभुसे प्रार्थना की। लक्ष्मणजीको सीताजीकी रक्षाका भार सौंपकर श्रीराम स्वर्ण-मृगका पीछा करने लगे। कुछ ही दूर जानेपर श्रीरामने उसे मार दिया। मरते समय मारीचने 'हा, लक्ष्मण' की पुकार की, जिसे सुनकर सीताजी घबरा गयीं और उन्होंने लक्ष्मणको श्रीरामके पास भेज दिया।

रावण इसी अवसरकी प्रतीक्षा कर रहा था। कुटियामें सीताजीको अकेला देख उसने उन्हें बलात् अपने विमानमें बैठा लिया और लंकाकी ओर चल पड़ा। सीताजी अत्यन्त करुण स्वरमें विलाप करने लगीं। गीधराज जटायुने उनका विलाप सुनकर रावणसे संघर्ष किया, किंतु रावणके तलवारसे आहत हो वे जमीनपर आ गिरे। पंपा सरोवरके ऊपरसे गुजरते हुए वहाँ सुग्रीव आदि वानरोंको देख सीताजीने अपने कुछ आभूषण गिरा दिये। रोती-बिलखती सीताजीको लंका ले जाकर रावणने उन्हें अशोक-वाटिकामें राक्षसियोंके पहरेमें बैठा दिया।

इधर श्रीराम मृगछाला लेकर वापस चले। लक्ष्मणको अपनी ओर आते देख वे घबरा गये। कुटियामें पहुँचनेपर उन्हें सीताजी वहाँ न मिलीं। भगवान् श्रीराम अब सांसारिक विरहीकी भाँति विषादग्रस्त हो गये। अनुज लक्ष्मणके साथ प्रलाप करते हुए वे पेड़-पौधोंसे सीताजीका पता पूछने लगे और वनमें भटकने लगे। आगे बढ़नेपर गीधराज जटायुपर उनकी दृष्टि गयी। घायल जटायुने उनसे सारी कथा कह सुनायी। श्रीरामके कोमल कर-स्पर्शसे जटायुकी सारी पीड़ा जाती रही और वे चतुर्भुज रूप धारणकर प्रभुके धाम चले गये। उनके चलते समय श्रीरामने उनसे कहा—'हे तात! सीताका हरण आप पिताजीसे जाकर न कहियेगा। यदि मैं राम हूँ तो स्वयं रावण अपने कुल-सहित वहाँ जाकर सारा समाचार सुनायेगा।' इस प्रकार गीधराज जटायुको पितृवत् सम्मान देकर श्रीराम आगे बढ़े।

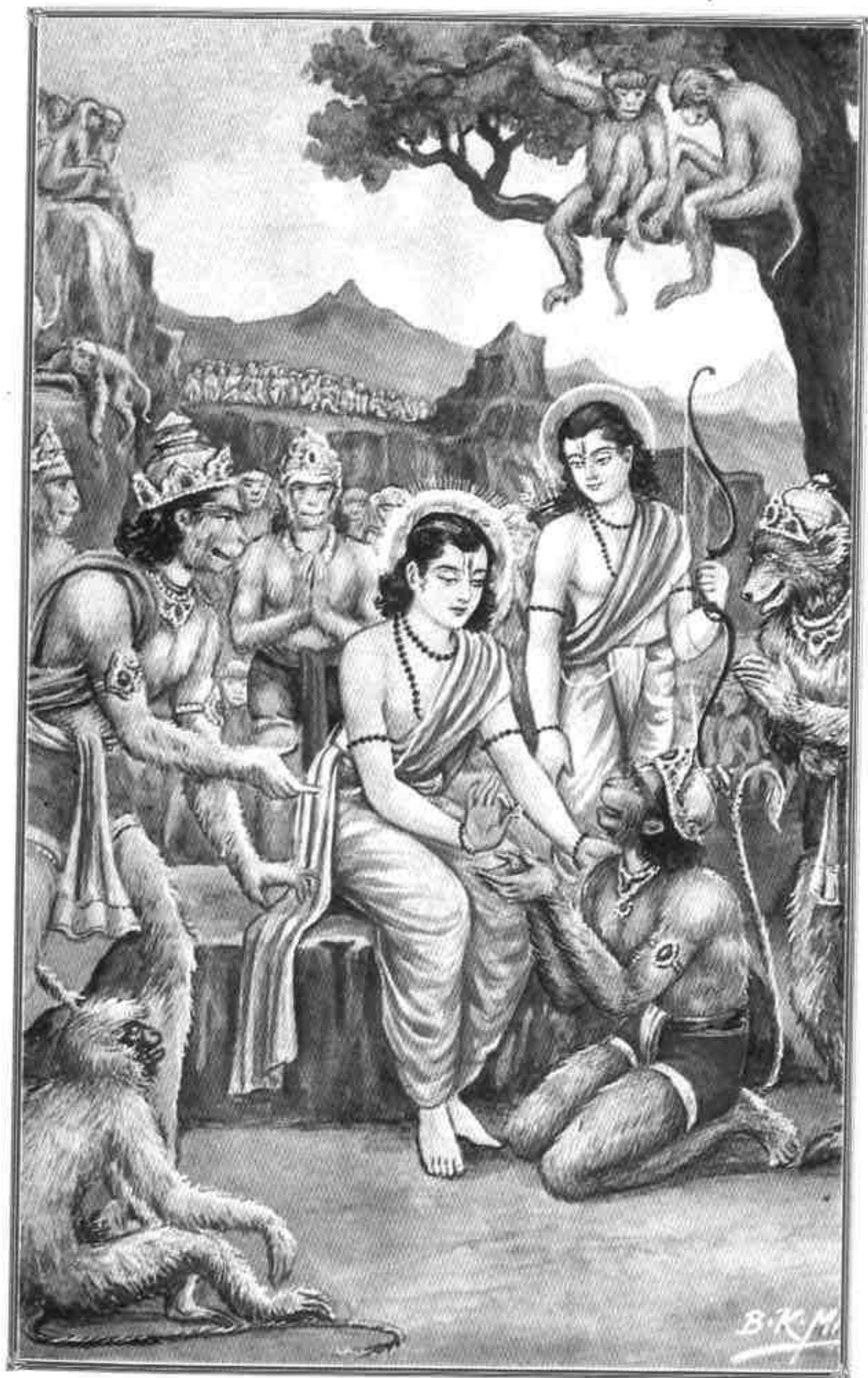


सुग्रीवसे मिताई

भगवान् श्रीराम छोटे भाई-सहित भक्तिमती शबरीके आश्रममें पहुँचे। शबरीके मीठे बेरोंने प्रभुको अभिभूत कर दिया। उसे नवधा भक्तिका उपदेश देकर श्रीराम-लक्ष्मण जब चलने लगे, तब शबरीने उन्हें पंपा सरोवर जाकर सुग्रीवसे मित्रता करनेकी सलाह दी। प्रभुके सम्मुख ही उसने योगाग्निसे अपने शरीरको जलाकर भस्म कर लिया।

पंपा सरोवर ऋष्यमूक पर्वतकी शृंखलाओंसे घिरा हुआ था। वहाँ सुग्रीव अपने मन्त्रियों हनुमान्जी आदिके साथ निवास करते थे। वे बालिके भयसे वहाँ छिपकर रहते थे। श्रीराम-लक्ष्मणको उस ओर आते देख वे और भी डर गये। हनुमान्जीको उन्होंने उनका परिचय जाननेके लिये भेजा। हनुमान्जी ब्राह्मण वेशमें वहाँ पहुँचे और प्रभुको पहचानकर उनके चरणोंमें गिर पड़े। दोनों भाइयोंके साथ हनुमान्जी सुग्रीवके पास पहुँचे। सुग्रीवने सीताजीद्वारा गिराये गये आभूषणोंको श्रीरामसे दिखाया। उन्हें पहचानकर प्रभुकी आँखें भर आयीं। सुग्रीवने भी अपनी व्यथा श्रीरामसे कही। बालिवधकी प्रतिज्ञा करके श्रीरामने सुग्रीवको आश्वस्त किया। अग्निकी साक्षी दिलाकर हनुमान्जीने श्रीराम-सुग्रीवकी मित्रताको और दृढ़ बना दिया।

श्रीराम अब किष्किन्धाकी ओर चले। उन्होंने सुग्रीवसे बालिको ललकारनेके लिये कहा। ललकार सुनकर बालि दौड़ा। दोनों भाइयोंमें घोर द्वन्द्वयुद्ध हुआ। श्रीरामके बाणकी चोट खाकर बालि धराशायी हो गया। वृक्षकी आड़से निकलकर भगवान् श्रीरामने बालिको उसका अपराध बताया—'रे शठ, सुन! छोटे भाईकी स्त्री, बहिन, पुत्रवधू और कन्या—ये चारों समान होती हैं; इनपर बुरी दृष्टि डालनेवाला वधके ही योग्य है।' कृपासिंधु श्रीरामने बालिको भी मुनिदुर्लभ गति प्रदान की। बालिपुत्र अंगदको उन्होंने युवराज बनाया और सुग्रीवको वानरोंका राजा। वर्षाऋतु प्रारम्भ हो गयी थी। किष्किन्धाका राज्य सुग्रीवको सौंपकर प्रभु श्रीराम छोटे भाई लक्ष्मणके साथ प्रवर्षण नामक पर्वतपर आ टिके।



मुद्रिका-दान

वर्षाकाल बीत जानेपर भी सुग्रीवने श्रीरामकी सुध न ली। तब प्रभुने लक्ष्मणजीको किष्किन्धा भेजा। उधर हनुमान्जी भी इस बातसे चिन्तित थे कि सुग्रीव राजमदमें प्रभुके कार्यको भुला बैठे हैं। उन्होंने सुग्रीवको समझाया। अब तो सुग्रीव डर गये। लक्ष्मणजीके आनेका समाचार सुनकर उनका डर दुगुना बढ़ गया। अंगद-हनुमान्जी आदिको भेजकर उन्होंने किसी तरह लक्ष्मणजीको शान्त कराया और उनसे क्षमा-याचना की।

दूत भेजकर सुग्रीवने अपनी समस्त वानरी सेनाको इकट्ठा किया और प्रभु श्रीरामके पास चले। अपनी भूलके लिये उन्होंने भगवान्से बहुविध पश्चात्ताप जताया। दूर-दूरसे आये असंख्य वानर-भालुओंकी सेनाको सुग्रीवने सीताजीका पता लगानेका आदेश दिया। उन्होंने कहा—‘एक माहके अंदर माता सीताका पता लग जाना चाहिये। जो कोई सैनिक सीताजीका पता लगाये बिना यहाँ लौटेगा उसे प्राण-दण्ड मिलेगा।’ वानर-भालुओंकी वह विशाल सेना सभी दिशाओंमें सीताजीकी खोज करने निकल पड़ी। जाम्बवान्, अंगद, हनुमान् आदि प्रमुख वीरोंको दक्षिण दिशामें जानेका आदेश हुआ।

सर्वज्ञ भगवान् श्रीराम यह जानते थे कि सीताजीका पता लगानेका कार्य केवल हनुमान्जी ही कर सकेंगे। अतः प्रभुने उनको अपनी अँगूठी देते हुए कहा—‘पुत्र हनुमान्! यह अँगूठी देखकर सीता तुम्हें पहचान लेंगी। उनका पता लगाकर और उन्हें ढाढ़स बँधाकर तुम सकुशल शीघ्र वापस लौटो।’ प्रभुका आशीर्वाद पाकर हनुमान्जी युवराज अंगद और जाम्बवान् आदिके साथ चल दिये। समुद्रके किनारे सम्पातीने उन लोगोंको सीताजीका पता बताते हुए कहा—‘जो वीर सौ योजनके इस समुद्रको लाँघ सके वही भगवान् श्रीरामका कार्य करनेमें सफल होगा।’ जाम्बवान्ने हनुमान्जीको उनके बलका स्मरण दिलाया। हनुमान्जी सबको सिर नवाकर प्रभु श्रीरामका कार्य सिद्ध करने उड़ चले।

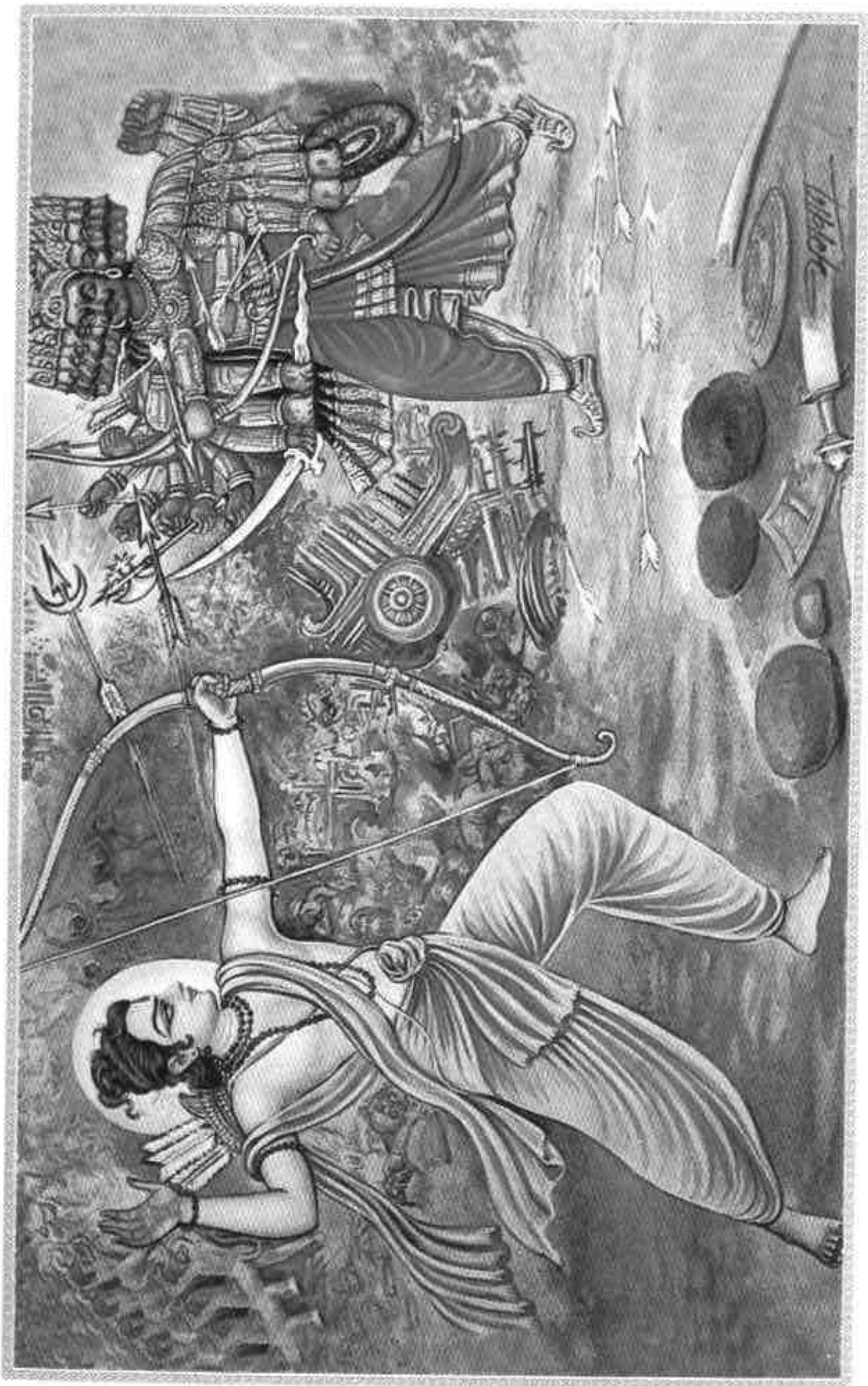


श्रीरामेश्वर-पूजन

सर्पोंकी माता सुरसाकी परीक्षामें सफल होकर तथा राक्षसी सिंहिकाको मारकर श्रीहनुमान्जी रावणकी नगरी लंका पहुँच गये। उन्होंने अत्यन्त छोटा रूप धारण कर लिया। प्रवेश-द्वारपर लंकिनीको घूँसेके एक ही प्रहारसे परास्तकर हनुमान्जी नगरके अंदर घुस गये। लंकाके प्रत्येक घरका उन्होंने निरीक्षण किया। सीताजी नहीं मिलीं। तभी विभीषणजीसे उनकी मुलाकात हुई, जो भगवान् श्रीरामके परम भक्त थे; हनुमान्जीसे उन्होंने सीताजीका पता बता दिया।

अशोक-वाटिकामें विरहिणी सीताजीकी दशा देख हनुमान्जी परम दुःखी हुए। अवसर देख उन्होंने प्रभु श्रीरामकी मुद्रिका माता सीताके पास गिरा दी। सीताजीके कहनेपर वे निकट चले आये और शुरूसे लेकर अबतककी सारी कथा उन्होंने कह सुनायी। सीताजीकी अनुमति लेकर हनुमान्जी फल खाने और बाग उजाड़ने लगे। रखवाले भागकर रावणके पास गये। रावणने अपने पुत्र अक्षयकुमारको भेजा। हनुमान्जीने उसे भी मार डाला। अब मेघनाद आया। प्रभु-कार्य सिद्ध करनेकी इच्छासे हनुमान्जी उसके ब्रह्मास्त्रमें बँधकर रावणकी सभामें पहुँचे। रावणने उनकी पूँछमें आग लगवा दी। हनुमान्जी स्वयं तो नहीं जले, हाँ, उन्होंने लंका अवश्य जला डाली। पुनः सीताजीसे पहचानस्वरूप उनकी चूड़ामणि लेकर और उनका आशीर्वाद प्राप्तकर वे वापस श्रीरामके पास लौट आये। सारा समाचार सुनकर श्रीरामने उन्हें गले लगा लिया।

विभीषणजीने भी रावणको समझाया। किंतु रावणने उन्हें लात मारकर लंकासे निकाल दिया। वे श्रीरामके शरणागत हुए। वानरी सेनाके साथ श्रीराम समुद्र-तटपर आ पहुँचे। उनके प्रभावसे परिचित होकर समुद्रने अपने बंधनका उपाय बतला दिया। रमणीय स्थान देखकर वहीं प्रभु श्रीरामने शिवलिङ्गकी विधिवत् स्थापना-अर्चना की। आज भी वह स्थान श्रीरामेश्वरम्के नामसे प्रसिद्ध है।



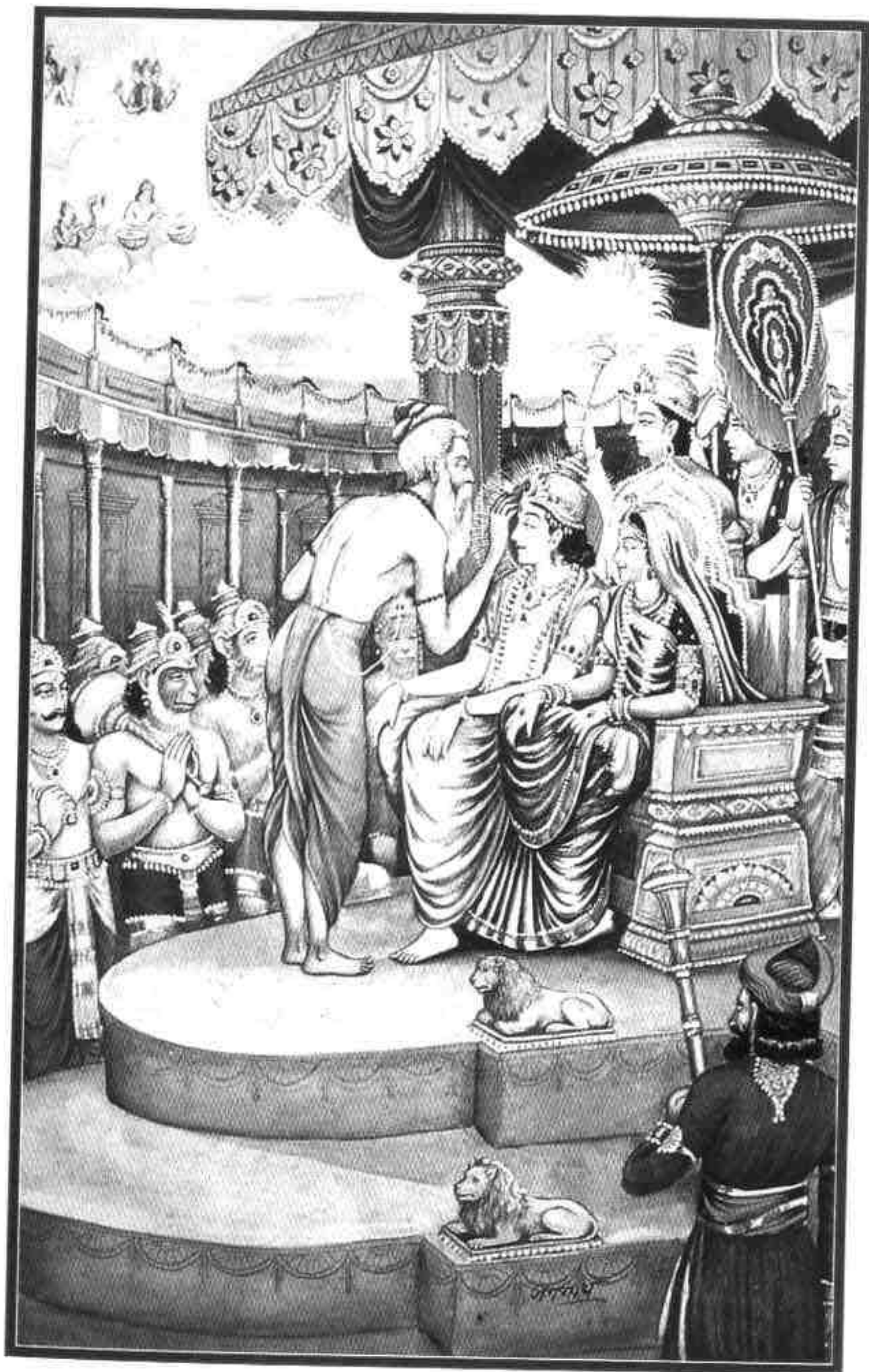
समुद्रपर पुल बँधवाकर श्रीराम अपनी सेनाके साथ उस पार उतर गये। रावणको एक बार और समझानेके उद्देश्यसे उन्होंने युवराज अंगदको भेजा। अभिमानी रावण अपने हठपर अडिग रहा।

वानर-भालुओंकी विशाल सेनाने श्रीरामकी अनुमति पाकर लंका-पर आक्रमण कर दिया। घमासान युद्ध होने लगा। राक्षसोंके समूह नष्ट होने लगे। रावणका सबसे बड़ा पुत्र मेघनाद युद्धभूमिमें आया। उसकी वीरघातिनी शक्तिने लक्ष्मणजीको मूर्च्छित कर दिया। जाम्बवान्की सलाहसे हनुमान्जी सुषेण वैद्यको ले आये। सुषेणने हनुमान्जीसे सुदूर धौलागिरिपर स्थित संजीवनी बूटी लानेको कहा। वायुपुत्र हनुमान्जी समूचा पर्वत ही लेकर दिन निकलनेसे पहले पहुँच आये। सुषेण वैद्यके उपचारसे लक्ष्मणजी पुनः स्वस्थ हो गये। युद्ध फिर शुरू हुआ। राक्षस फिर मरने लगे।

रावणने अपने भाई कुंभकर्णको जगाया। मतवाले गजराजके समान वह वानरी सेनाको विदीर्ण करने लगा। आखिर भगवान् श्रीरामके बाणोंसे मरकर उसे सद्गति मिली। मेघनाद एक बार फिर आकर तरह-तरहसे माया-युद्ध करने लगा। किंतु इस बार शेषावतार लक्ष्मणने इन्द्रजित् मेघनादको यमलोकका रास्ता दिखा दिया।

अन्तमें स्वयं रावण अपनी बची-खुची राक्षसी सेनाके साथ युद्ध करने आया। कई दिनोंतक कौतुकी भगवान् श्रीरामने उसे खेलाया। किंतु सीताजीकी चिन्तित अवस्था और देवताओंकी पीड़ाको स्मरण करके उन्होंने रावणको खत्म कर डालनेका निश्चय किया। एकतीस बाण उन्होंने छोड़े। तीस बाणोंने रावणके दस सिरों और बीस भुजाओंको काटा तथा अन्तिम बाणने उसकी नाभिका अमृत सोख लिया। श्रीरामके हाथों मरकर रावणको सुरदुर्लभ गति मिली।

लंकाका राज्य विभीषणको सौंपकर तथा अग्निदेवसे अपनी असली सीताको प्राप्तकर प्रभु श्रीराम अयोध्या लौटनेको उद्यत हुए।



श्रीरामका राज्याभिषेक

प्रभुके वनवासकी अवधि बीत चली थी। चौदह वर्ष पूरा होनेमें अब केवल एक दिन शेष बचा था। भरतलालकी दशा अत्यन्त शोचनीय हो गयी थी। वे सोच रहे थे कि यदि प्रभु श्रीराम कल भी न आये तब तो ये प्राण बचनेवाले नहीं। श्रीराम-विरहके सागरमें भरतजी डूब-उतरा ही रहे थे कि पवनपुत्र हनुमान्जी मानो जहाज बनकर आ पहुँचे और 'प्रभु श्रीराम अनुज लक्ष्मण तथा माता जानकीके साथ सकुशल आ रहे हैं'—ऐसा कहकर उन्होंने भरतजीको जीवन-दान ही दे दिया।

सम्पूर्ण अयोध्यामें खुशीकी लहर दौड़ गयी। प्रभुकी अगवानी करनेके लिये बालक-वृद्ध, स्त्री-पुरुष सभी अपना सारा काम छोड़कर दौड़े। अयोध्याके निकट आकर श्रीरामने अपने पुष्पकविमानको नीचे उतरनेका संकेत किया। कुलगुरु वसिष्ठ तथा भाइयोंसे मिलकर श्रीराम सभी माताओंसे जाकर मिले। विमानसे उतरनेके बाद वस्तुतः भगवान् भी अपने भक्तोंसे एक साथ मिलनेके लिये उत्सुक हो उठे थे। इसलिये वे अनेक रूपोंमें प्रकट हो गये। सबने यही समझा कि प्रभु सबसे पहले मुझसे ही मिले हैं। उस समयकी खुशी और प्रीतिका वर्णन कर पाना सहज ही सम्भव नहीं।

गुरुदेव वसिष्ठजीने ब्राह्मणोंको बुलाकर श्रीरामके राज्याभिषेकके लिये विचार-विमर्श किया। शुभ घड़ी और मुहूर्तमें श्रीराम अयोध्याके राजसिंहासनपर आसीन हुए। रामराज्यकी स्थापना हुई, जिसकी प्रशंसा चिरकालसे होती आ रही है। श्रीरामके शासनकालमें प्रजा सभी प्रकारके आधि-व्याधियोंसे मुक्त थी। सभी लोग परस्पर प्रेम करते थे तथा अपने-अपने वर्णाश्रम-धर्मके अनुसार आचरण करते थे। इस प्रकार बारह हजार दिव्य वर्षोंतक प्रभु श्रीरामने इस सप्त द्वीपवती पृथ्वीपर शासन किया। मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीरामके चरणोंमें हम सब नतमस्तक होते हैं।